मानवतावादी चेतना

डॉ. अशोक कुमार सिडाना* और जगदीश प्रसाद**

सारांश

मानवतावाद मानव मूल्यों एवं चिन्ताओं पर ध्यान केन्द्रित करने वाला अध्ययन, दर्शन या अभ्यास का एक दृष्टिकोण है। यह एक ऐतिहासिक आन्दोलन जो विशेष रूप से इतालवी पुनर्जागरण के साथ जुड़ा हुआ है। शिक्षा में यह एक ऐसा दृष्टिकोण है जिसमें छात्रों को जानकारी देने के लिए साहित्यिक अर्थों का उपयोग होता है या मानविकी पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

यह लोकतान्त्रिक और नैतिक जीवन दृष्टि है जो यह पुष्टि करती है कि मनुष्यों के पास अपने जीवन को अर्थ और आकार देने का अधिकार और उत्तरदायित्व है। तर्क की भावना में मानवीय और दूसरे प्राकृतिक मूल्यों पर आधारित नैतिकता और मानवीय क्षमताओं के माध्यम से मुक्त अन्वेषण के जरिये एक अधिक मानवीय समाज के निर्माण का समर्थन करती है।

प्रस्तावना

विश्व की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। व्यक्ति के चारों ओर भीड़ ही भीड़ दिखाई पड़ती है। हर जगह समाज, राष्ट्र, समूह शब्द सुनाई देते हैं। इस कोलाहल में व्यक्ति का चीत्कार भी सुनाई नहीं देता। लगता है व्यक्ति, व्यक्ति न रहकर समाज, राष्ट्रता या समूह का एक पूर्जा मात्र है। उसको अपने अन्दर एक रिक्तता का आभास होने लगता है। उसका मन कभी न कभी कराहने लगता है किन्तु हम उसके कराहने की आवाज को भी अनसुना कर देते है।

हम विज्ञान के क्षेत्र में आशातीत सफलता प्राप्त करके भी साधारण मनुष्य के जीवन को सुखमय नहीं बना पा रहे है। मानवतावादी दर्शन का दावा है कि वह मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने के लिए आगे आया है। वह मानव को केन्द्र में रखकर दर्शन का विकास करता है और शिक्षा के क्षेत्र में भी योगदान करने का दावा करता है।

वर्तमान समय में मानवतावाद मानवमात्र का संरक्षक है। आज मानवतावादी अवधारणा के संबंध में कोई भी व्यक्ति अपरिचित नहीं है। मानवतावाद के संदर्भ में विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की किन्तु समालोचनात्मक रूप से विश्लेषण किसी भी व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया। मानवतावाद में व्यापक रूप से सहिष्णुता एवं विवेक का सामंजस्य प्राप्त होता है।

लेमॉण्ट के मानववादी दर्शन के अनुसार– मानवतावाद राष्ट्र, जाति धर्म और ऐसी ही अन्य सीमाओं का अतिक्रमण करने वाली एक ऐसी नैतिक व्यवस्था में विश्वास रखता है सम्पूर्ण मानव–मूल्यों को इस लोक के अनुभवों और संबंधों पर आधारित मानती है तथा जिसका चरम लक्ष्य पार्थिव सुख, स्वतंत्रता और प्रगति है अर्थात् आर्थिक, सांस्कृतिक और नैतिक प्रगति। मानवतावाद की नियतीवाद या भाग्यवाद के सभी सिद्धांतों के विरूद्ध यह मान्यता है कि अतीत से प्रतिबाधित होकर भी मनुष्य रचनात्मक वरण और कर्म की वास्तविक स्वाधीनता रखता है तथा कुछ सीमाओं के साथ स्वयं अपने भाग्य का विधायक है।

मानवता के लक्षणों में प्रमुखतः सत्य का अनुपालन, दूसरों के दृष्टिकोण में औचित्य बोध अहिंसा का आचरण, दूसरों के एवं स्वयं के स्वाभिमान की रक्षा, शिष्ट व्यवहार, सहिष्णुतामय सद्भाव, दुर्बल की रक्षा, अधिकार भावना का त्याग, परगुणग्राह्यता आदि सम्मिलित है।

मानवतावाद के लिए पाश्चात्य शब्द 'ह्यूमेनिज्म' (Humanism) का प्रयोग किया जाता है। यह शब्द लैटिन के 'होमो' (Homo) शब्द से उत्पन्न हुआ है। मानवतावाद एक दार्शनिक विचारधारा है जो मानव को सम्पूर्ण सृष्टि का केन्द्रभूत स्वीकार करती है।

ए.ए. सईद के अनुसार 'मानवता व्यक्ति की गरिमा से संबंधित है। व्यक्तिगत पहचान का स्तर आत्मसम्मान को संरक्षित करता है और मानवीय समुदाय को बढ़ावा देता है।

न्यायविद् वैंकेट चलैया के अनुसार 'मानवता हमारी प्रकृति में निहित है और इसके बिना हम व्यक्ति के रूप में जीवन व्यतीत नहीं कर सकते।

*शोध निर्देशक, जगदीश प्रसाद, श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, सी.टी.ई. केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर (राजस्थान)
**शोध छात्र, शिक्षा संकाय, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

आज मानव को मानव न मानकर उसे शेष सब कुछ माना जाता रहा है परन्तु मानव सबसे पहले मनुष्य है। जिस तरह औद्योगीकरण में मनुष्य की कोई स्थिति नहीं है उसी प्रकार नगर में मनुष्य की गणना जनसंख्या में वृद्धि के रूप में मानी जाती है। हम जब किसी विषय पर विचार करते हैं या किसी समस्या का समाधान खोजते है तो आदमी की संख्या तो दिमाग में रहती है परन्तु "मनुष्य मनुष्य है" यह ध्यान में नहीं रहता है।

पाश्चात्य जगत् का इतिहास हमें बताता है कि एक समय था जब पश्चिम में परलोक के जीवन में प्रधानता थी और मनुष्य का वर्तमान जीवन परलोक की भावना से नियंत्रित था। कालान्तर में यूरोप की जनता केवल परलोक की बातों से सन्तुष्ट नहीं हुई अतः वह इहलोक की बातें चाहने लगी। इसीलिए नवजागरण सम्भव हुआ। 14वीं से 16वीं शताब्दी के मध्य का काल यूरोप में पुनर्जागरण का काल कहा जाता है। इस काल में शिक्षा में मानवतावाद ने जोर पकड़ा। यह शास्त्रीय मानवतावाद था।

औद्योगिकरण के फलस्वरूप पाश्चात्य देशों में मनुष्य को मशीन माना गया। वहाँ पर मनुष्य परेशान हो गया तो उसने विद्रोह किया। उसी विद्रोह की भावना की ध्वनि आधुनिक मानवतावाद की संज्ञा से संज्ञापित की गयी। नगरीकरण एवं औद्योगीकरण के फलस्वरूप का क्रन्दन या चीख ही मानवतावाद कहलाया।

भूतकाल की कुछ घटनाओं के संदर्भ में मानव को समझने में एक यथार्थ बात मिलती है कि मानव जैसा उसने आज तक अपना रूप दिखाया है वह मानव नहीं है जैसी उसके होने की परिभाषा उन्नीसवी और प्रारम्भिक बीसवी शताब्दी के प्रत्ययववाद द्वारा की गई थी। आज हम आणविक युग में रह रहे हैं जिसमें इस डर के कारण कि मानव अपने नवीन आयुध रूपी खिलौने से कुछ भी खेल खेल सकता हैं हम अपने को लगातार अस्तित्वहीनता के कगार पर पाते है। हम नहीं जानते है मानव जाति के स्वयं के विनाश की सम्भावना कितनी यथार्थ है। हम इसे जानने के लिये बहुत उत्सुक भी नहीं हैं और हम आशा करते है कि इसकी सम्भावना ही इसके स्वयं का प्रतिबन्ध है।

हिरोशिमा और नागासाकी में मानव जीवन के भयंकर विनाश से सारा संसार क्षुब्ध हुआ था। उसी समय हम यह अनुभव करने को बाध्य हुये थे कि आणविक युग प्रारम्भ हो चुका है। अगर हम द्वितीय विश्वयुद्ध से प्रथम विश्वयुद्ध की ओर पुनः मुड़कर देखे तो उस समय का प्रस्तुत उपक्रम बहुत लोगो को युद्ध प्रक्रिया के रूप में याद है जो मानव का मानव पर ऐसे अनुपात में युद्ध था जैसा पहले कभी नहीं सुना गया था और अन्ततोगत्वा सारा जगत इसमें फँसा पड़ा था या कम से कम इसने जगत को उस समय तक अवरोध पर खड़ा कर दिया था जब तक समस्या का अस्थायी समाधान न मिल गया।

वर्णन के सर्वाधिक बाह्य स्तर पर देखने में मानव को हम आज जैसा देखते है वह वैसा मानव नहीं है जिसके विषय में प्रत्ययवाद ने विकास ने सतत् नवीन रूपों की ओर प्रगति के लिये कल्पना की थी जो उसके लिए अग्रगामी और ऊर्ध्वगामी होती।

वास्तव में यह प्रश्न पूर्णरूप से स्पष्ट है कि किस प्रकार से ऐतिहासिक प्रभाव की घटनायें वैध रूप से दार्शनिक सम्प्रत्ययों को परिवर्तित करने का कार्य कर सकती है। क्या दर्शन इतिहास के ऊपर है ?क्या इसके सम्प्रत्यय, इतिहास जो कुछ व्यक्त करता है उसके होते हुये भी अडिग बने रहतें हैं ?या क्या इतिहास दर्शन रूपी चक्की के लिये पिष्टधान्य रूपी तथ्य ठीक उसी ढ़ंग से देता है जिस प्रकार आवश्यकता है ?क्या इसके दत्तों पर बहुत गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है ?ये प्रश्न इतने बड़े हैं कि इनका समाधान यहाँ नहीं ढूँढा जा सकता है, इसलिये अब हम जो कुछ कहने का प्रयत्न करेंगे उसमें सम्भवतः उसका बहुत ही कम आभास होगा जो इनका उत्तर बन सके।

मानवतावाद के अंतर्गत मनुष्य का अस्तित्व स्वीकार किया गया है। मनुष्य ही सब कुछ है वह किसी का प्रतीक मात्र नहीं है। उसकी वैयक्तिकता पहचानी जा सकती है।

मानवतावाद का मानव चलता–फिरता नजर आ रहा है। मानवतावाद में मनुष्य कल्पनाओं में नहीं बाह्य जगत में अस्तित्त्ववान है। उसमें विचार, आकांक्षा एवं भावनाएँ हैं। विज्ञान की कुछ विकृतियों में एक विकृति है 'मानकीकरण'। खाने–पीने का ढंग, खाना बनाने का ढंग, बालों की कटिंग, कपड़े पहनने के तरीके एक समान होते जा रहे हैं। एक ही वस्तु या तरीके में रहते–रहते मनुष्य परेशान–सा हो जाता है। आज आधुनिक विज्ञान ने मनुष्य को परेशान कर रखा है। उसकी सारी चीज मानक होती जा रही है। जैसे – भोजन करने के तरीके भी मानक हो गये है। वह

मेज–कुर्सी पर भोजन करता है। यह शैली मानक होती जा रही है। मानवतावाद इस एक समान नीरसता के विरूद्ध है और वैयक्तिकता को महत्व देता है।

कोई मनुष्य दुःखी है तो कोई सुखी है परन्तु उसकी गणना आज एक संख्या के रूप में मानी जाती है। आज का मनुष्य परेशान है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद देखा जाय तो मानव प्रत्येक क्षण दुःखी प्रतीत होता है। मनुष्य की इसी दुःखपूर्ण स्थिति को देखकर कुछ दार्शनिकों का मन दया से द्रवित हो गया और उन्होंने दीन–दुःखियों की सेवा करने को मानव–जीवन का चरम लक्ष्य घोषित किया। इस स्थिति में मानवतावाद की झलक मिलती है। मानवतावादी विचारक मानव को दुःखों से दुटकारा देने का उपाय ढूँढता है, दुःख के कारणो पर विचार करता है और कुछ समाधान प्रस्तुत करता है। इस प्रकार वह मनुष्य को इस भीड़ – भाड़युक्त संसार में भी अकेला देखता है और उसमें निराशा, कुण्ठा, संत्रास, चिन्ता आदि को देखकर मनुष्य की दयनीय स्थिति पर विचार करने लगता है यह विचार मानवतावादी विचारक है। मैसलों के अनुसार 'मानवतावाद एक ऐसा शब्द है जो विभिन्न लेखकों द्वारा विभिन्न अर्थों में प्रस्तुत किया गया है। इनमें से एक में यह अर्थ निहित है, कि मनुष्य मानव–विचार की समस्त पृष्ठभूमि है, ईश्वर नहीं है, कोई अतिमानवीय वास्तविकता नहीं है। जिससे मनुष्य को जोड़ा जा सके।"

पिछले कुछ वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में मानवतावादी विचारधारा बहुत तेजी से उभरकर आती प्रतीत हो रही है। मानव तथा समाज के पारस्परिक सम्बन्धों तथा प्रतिक्रियाओं की विभिन्न दार्शनिकों ने विभिन्न प्रकार से व्याख्या की है। मैसलो के शब्दों में मानवतावाद एकदम नई तथा क्रांतिकारी विचारधारा है। इस विचारधारा ने मानव–जीवन से संबंधित ज्ञान–विज्ञान तथा समस्त विषयों को एक नया आधार–मानवतावादी आधार देने का प्रयत्न किया है जिसके फलस्वरूप सभी क्षेत्रों में नयी मान्यताएँ विकसित हो रही है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानवतावाद एक ऐसा दृष्टिकोण है जिसमें मानवता को प्रधानता दी जाती है और जिसके अन्तर्गत समाज की प्रत्येक प्रक्रिया की व्याख्या एवं मूल्यांकन इस दृष्टिकोण से किया जाता है कि वह कहाँ तक मानवीय हितों से संबंधित है। जहाँ व्यक्ति के स्वयं के विकास, सुख तथा आत्म–अनुभूति पर बल दिया जाता है वहीं मानवतावाद का जन्म होता है।

यद्यपि मानवतावाद को 1960 के पश्चात् एक नवीन गति तथा एक नयी दिशा मिली है, तथापि इस विचारधारा का इतिहास बहुत पुराना है। ब्रूबेकर ने अपनी पुस्तक में 'मानवतावादी धार्मिक शिक्षा' का उल्लेख किया है, जिसमें शिक्षक मानवीय अनुभवों के माध्यम से ब्रह्म की उपलब्धि पर बल देता है। इस विचारधारा की प्रमुख विशेषता मानव–अनुभव एवं मानव–प्रेरणा थी। यदि अतीत के पर्दों के पीछे और अधिक दूर तक जायें तो मानवतावाद के तार अरस्तु तथा टॉमस एक्विनास के विचार से जुड़े प्रतीत होते हैं।

ब्रूबेकर के मतानुसार मानवतावाद मानव–स्वभाव और मानव दृष्टिकोण पर बल देता है। प्राचीन मानवतावादी मानवीय विवेक बुद्धि को स्थिर एवं अपरिवर्तनशील मानते हैं जबकि आधुनिक मानवतावादी यह स्वीकार करते हैं कि मनुष्य की तर्कबुद्धि या विवेक में सुधार हो सकता है।

मानवतावाद की प्रमुख विशेषताएँ

मानवतावाद की हमें निम्नलिखित विशेषताएँ दृष्टिगत होती है –

1. यह संसार भ्रम नहीं हैं। संसार सत्य है। यह सांवेगिक सम्भावनाओं से भरा हुआ है, यह निरन्तर विकासशील है। यह परिवर्तनशील भी है।
2. मनुष्य सर्वाधिक शक्तिशाली है। मानवतावाद मनुष्य को निरीह प्राणी नहीं मानता। वह मनुष्य की शक्ति में आस्था प्रकट करता है।
3. मानवतावाद में मनुष्य को सबसे सुन्दर बतलाया गया है। इस सन्दर्भ में कविवर सुमित्रानन्दन पन्त जी की निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य है –

   'सुन्दर है विहग, सुमन सुन्दर
   मानव तुम सबसे सुन्दरतम।'

4. मानवतावाद में मनुष्य को न तो केवल मशीन न ही केवल जीव माना गया है। वह असीम सम्भावनाओं से युक्त माना गया है।
5. मनुष्य के जीवन में शिवम् एवं सुन्दरम् के तत्त्व विद्यमान है। मानवतावाद का मानव इस भावना से भरा रहता है।
6. मनुष्य जाति की समस्याओं का समाधान केवल वस्तुनिष्ठ नीति से ही नहीं वरन् व्यक्तिनिष्ठ से भी

सम्भव है।

7. मानवतावाद मनुष्य की गरिमा में विश्वास करता है। मानवतावाद के मानव में रचनात्मकता का गुण होना चाहिए।
8. शान्ति, प्रगति और जनतंत्र – ये तीन मानवतावाद के आधार माने गये है। प्रजातंत्र शांति में प्रगति करता है। युद्ध में मनुष्य के हित की चिंता नहीं होती। मनुष्य युद्ध काल में राजनीति का शिकार हो जाता है। यदि शांति और प्रजातंत्र है तो वह आगे बढ़ता है और बढ़ता जायेगा, अन्यथा वह ह्रास की ओर जायेगा। युद्ध तो मनुष्य के विनाश की प्रक्रिया है।
9. मानवतावाद पुनर्रचनावादी और भविष्योन्मुख होता है। इसका दर्शन भविष्य की विकासोन्मुख प्रक्रिया से जुड़ा है।
10. मानवतावाद संस्कृति का पुनर्जागरण करना चाहता है। यह मनुष्य की संस्कृति का पुनरूद्धार करने के लिए विश्व के रंगमंच पर अवतरित हुआ है।

मनुष्य के व्यवहार को समझने के दृष्टिकोण से मनोविज्ञान की व्यवहारवादी विचार– धारा रही है। व्यवहारवाद के अनुसार व्यक्ति के विकास की सीमा उसके जीवन की दिशा निर्धारित करती है। उनका कहना है कि मनुष्य जो कुछ भी किसी समय होता है वह सब उसका परिणाम है जो उसके जीवन में घटा है। इस प्रकार यह विचारधारा मानव को महत्त्व न देकर बाह्य दशाओं पर बहुत बल देती है। इसके विपरीत फ्रायड व्यक्ति के अचेतन मन एवं उसकी आन्तरिक गहराइयों में मानव–विकास एवं कल्याण के उद्‌गम खोजता है। मानव के विकास को मनोविश्लेषण उसके अहम्, इदम्, परा–अहम् के बीच हुई अंतर्क्रिया का परिणाम मानता है एवं मानव को विकास का स्रोत मानता है।

इन दोनों विचारधाराओं के अलावा एक तीसरी विचारधारा मानवतावादी मनोविज्ञान की हैं जो पिछले कुछ वर्षों से अमेरिका में प्रबल हुई है। मनोवैज्ञानिकों की ऐसी मान्यता है कि मनोविश्लेषणवाद व व्यवहारवाद दोनों मानवीय प्रकृति की व्याख्या ठीक ढ़ंग से नहीं कर पाये हैं। अतः इन दोनों के साथ–साथ मानवतावादी मनोविज्ञान का विकास होता रहा है। 1962 में यही विचारधारा 'मानवतावादी मनोविज्ञान संघ' के रूप में उभरकर आयी। मानव–प्रकृति के जिन पक्षों का मनोविश्लेषणवाद तथा व्यवहारवाद ने अभी उल्लेख नहीं किया, इस विचारधारा ने उनका गहन अध्ययन किया। मानव क्या है, इससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण उनके लिए यह है कि मानव क्या हो सकता है ?

भारतीय दार्शनिकों का मानवतावाद प्राचीनकाल से ही प्रचलित रहा है। प्राचीन समय में भी हमारा यह ध्येय रहा कि सभी मानव सुखी रहे। इसी को हम मानवतावाद कहते हैं। संस्कृत साहित्य का एक श्लोक देखिए –

'सर्वे भयन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पष्यन्तु मा कश्चित् दुःख
भाग्यभवेत्।।'

इस श्लोक से मानवतावाद की भावना स्पष्ट होती है। इसमें यह देखने को मिलता है कि पुरातन काल में भी मनुष्यों को सुखी होने की कामना की गई थी।

गौतम बुद्ध ने भी इस संदर्भ में कहा कि मनुष्य परेशानियों (दुःखों) से छुटकारा पाना है। आधुनिक युग में भी हम देखते है कि महात्मा गाँधी, टैगोर, जवाहरलाल नेहरू, स्वामी दयानन्द आदि ने एकमत होकर कहा कि मानव का कल्याण हमारा परम धर्म है।

भारतीय मानवतावादी विचारकों ने गरीबों की सेवा करना, दीनों के दुःख में दुःखी होना, उनकी दीन–दशा पर ध्यान देना अपना सर्वोत्कृष्ट धर्म माना है। भारतीय शिक्षा में मानवतावाद एक रेशमी धागे की तरह टैगोर, गाँधी, जाकिर हुसैन, राधाकृष्णन्, इकबाल, नेहरू आदि शिक्षाशास्त्रियों की विचारधारा से गुजरता चला गया है। इसकी व्याख्या के.जी.सैयदैन ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमनिस्टिक ट्रेडीशन इन इंडियन एजूकेशन' में की है। उनके मतानुसार ये सभी शिक्षाशास्त्री मानवतावादी थे क्योंकि उन्होंने मनुष्य को मूल्यों का केंद्र बिंदु माना है। सैयदैन के अनुसार मानवतावाद ने मानव मनों की सुन्दर, अच्छी न्यायोचित बातों की समालोचना करके एवं इन बातों के स्रोत का पता लगाकर बुद्धिमानी का परिचय दिया।

डॉ. राधाकृष्णन् ने ऑक्सफोर्ड में अपने एक भाषण में कहा था कि मनुष्य–मनुष्य का दार्शनिक हो गया है। एक नया मानवतावाद क्षितिज पर उदीयमान है किन्तु इस बार यह सम्पूर्ण मानवता को अपने में समेटे हुए है।

गाँधीजी ने यह कहा था कि 'राष्ट्रीयता का मेरा विचार यह है कि मेरा देश मर जाए जिससे कि

मानव–जाति जिन्दा रह सके।' यह वाक्य गाँधी जी के मानवतावाद का द्योतक है।

उनका मानवतावाद सम्पूर्ण मानव–जाति की एकता तथा अखण्डता पर बल देता है। उनके शिक्षागत मानवतावाद की एक और विशेषता है – 'मनुष्य की असीम शक्ति पर विश्वास।' वे मानव को परिस्थितियों का दास नहीं मानते हैं और न उसे प्रगतिशील जीव ही समझते हैं वरन् इससे अधिक उसे वे सृजनात्मक, मौलिक एवं आध्यात्मिक सत्ता मानते हैं। इन सभी भारतीय शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास को बहुत महत्त्व दिया है जो उनकी मानवतावादी शिक्षा का केन्द्र कहा जाता है।

वर्तमान युग के दो मुख्य आदर्श हैं – एक, मानवतावाद और दूसरा, वैज्ञानिक प्रवृति। यदि इन दोनों को मिलाकर एक आदर्श रूप से स्वीकार किया जावें तो उसे हम वैज्ञानिक मानवतावाद कह सकते है।

मानवतावाद का केन्द्रीय विचार मनुष्य है। इस विचारधारा के अनुसार मनुष्य की सेवा करना सबसे बड़ा धर्म है। हमारे सारे कार्यों का लक्ष्य मानव है। कोई विचार, वस्तु या कार्य अभीष्ट है या नहीं, उपयोगी है या अनुपयोगी–इसका निर्णय मनुष्य को सामने रखकर किया जायेगा। मानव ही सभी प्रकार के कार्यों की कसौटी होगा। ब्रूबेकर और मैसलो सारे दर्शन और सारी शिक्षा का केन्द्र–बिन्दु मानव को ही मानते है।

विज्ञान की दृष्टि में मनुष्य सामान्यतः एक मशीन है और इस दृष्टिकोण की परिणति यान्त्रिकतावाद के रूप में होती है। जब विज्ञान में मनुष्य को भावनामय एवं विचारवान् प्राणी के रूप में स्वीकार किया जाता है तो वह वैज्ञानिक मानवतावाद हो जाता है। यह वाद एक सार्वभौमिक दृष्टिकोण है। नेहरू के शब्दों में मानवतावाद एवं वैज्ञानिक प्रवृत्ति के बीच एक संश्लेषण ही वैज्ञानिक मानवतावाद है। वैज्ञानिक मानवतावाद का यह विश्वास है कि मानव–जीवन का प्रमुख उद्देश्य मानव–जाति की प्रसन्नता एवं सुख के लिए प्रयत्न करना है। अतः वैज्ञानिक मानवतावाद जीवन के प्रति मानव–केंद्रित दृष्टिकोण है। वैज्ञानिक मानवतावाद सृष्टि के प्रति उसके दृष्टिकोण एवं जीवन के लक्षण तथा मान्यताओं, सत्य के स्वरूप आदि के संबंध में विशिष्ट दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

वैज्ञानिक मानवतावाद की मान्यता है कि सृष्टि भ्रम नहीं है। वह एक सत्य है जो अनेक सम्भावनाओं से पूर्ण है, जो सदैव विकसित एवं परिवर्तित होती रहती है। मानव इस विकास की चरम सीमा है। इन मानवतावादियों के अनुसार मानव में असीम मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति है। तथा वह अपनी नियति का स्वयं नियामक है। सत्यम् –शिवम्– सुन्दरम् के आदर्श को प्राप्त करना उसका लक्ष्य होना चाहिए।

वैज्ञानिक मानवतावाद एक ऐसा दृष्टिकोण है जो केवल वैज्ञानिक अथवा केवल मानवीय नहीं है। वैज्ञानिक मानवतावाद जीवन के प्रति मानव–केन्द्रित दृष्टिकोण है। मानवगत विश्वास ही उसका प्रमुख आधार है। कु. साबिरा जैदी के अनुसार मानवतावाद इस प्राकृतिक जगत में सम्पूर्ण मानवता की अधिकाधिक भलाई के लिए सहर्ष सेवा है और यह सेवा जनतंत्र एवं तर्क की पद्धतियों से होती है। यह मनुष्य को एक मशीन के रूप में स्वीकार न करके, उसे एक विलक्षण शक्ति–पुंज मानता है। इन मानवतावादियों का नारा यह है कि मानव–प्रगति की एक दिशा आध्यात्मिक प्रगति भी है।

वैज्ञानिक मानवतावाद सही अर्थ में मानवीय है। कुमारी साबिरा जैदी के ही शब्दों में – 'यह मनुष्य की गरिमा व मूल्य की ध्वनि को पुनः गुँजरित करता है और मानता है कि सभी समाज–सुधारकों के लिए मनुष्य का सुख ही सर्वोच्च भद्र या शिव है।'

ये मानवतावादी ऐसे समाज का निर्माण करने पर जोर देते हैं, जिसमें शांति प्रगति, वस्तु बाहुल्य एवं स्वतंत्रता प्रधान हो जिसका आधार सामाजिक समानता न्याय, एक –दूसरे के प्रति आदर–भाव तथा सहयोग हो तथा जिससे मानव–जाति की एकता तथा विश्व बन्धुत्व की भावना को श्रेष्ठ माना जाये।

मानवतावाद के संबंध में अब तक के वर्णन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह विचारधारा समाज तथा व्यक्ति के संबंधों को नये दृष्टिकोण से देखती है। यह एक ऐसा दार्शनिक परिवर्तन है जो हाइटहेड के शब्दों में सैंकड़ों वर्षों में एक आध बार घटित होता है।

अब मानवतावादी शिक्षा के उद्देश्यों पर विचार कर लेना चाहिए। मानवतावादी शिक्षा का चरम लक्ष्य व्यक्ति को सुखी बनाना होगा जिससे कि वह प्रगति करता जाए और इस संसार को रहने योग्य स्थान बना सके। मानवतावादी शिक्षा के अग्रलिखित उद्देश्यों की प्रायः चर्चा की जाती है –

1. मानवतावादी शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में आत्म–विश्वास जाग्रत करना है। मानवतावाद का केन्द्र–बिन्दु मानव है किन्तु यदि वह आत्म–विश्वास से विहीन हो जायेगा तो मानवतावाद का सारा प्रयास निष्फल हो जायेगा। अतः शिक्षा द्वारा उसमें आत्मविश्वास जाग्रत करना है।
2. शिक्षा का उद्देश्य मानव की सभी योग्यताओं का विकास करना है। किसी एक पक्ष पर अधिक बल देने से उसके चतुर्दिक विकास में बाधा पड़ सकती है। अतः उसकी समस्त क्षमताओं का विकास शिक्षा का लक्ष्य देना चाहिए।
3. शिक्षा द्वारा बालक में रचनात्मक समालोचना एवं समालोचनात्मक रचनात्मकता का विकास करना आवश्यक है। कु. साबिरा जैदी के शब्दों में वैज्ञानिक मानवतावादी शिक्षा का यह महत्वपूर्ण उद्देश्य है।
4. मानवतावादी शिक्षा का एक उद्देश्य यह है कि बालक की चेतना को सशक्त एवं जागरूक बनाया जाए, जिससे वह जीवन में जो कुछ सुन्दर एवं अनोखा है उसके विषय में सजग रह सके एवं जो कुछ घिसा–पिटा एवं रूढ़िगत है उससे मुक्ति पा सके। इस उद्देश्य का प्रबल समर्थक मैसलो है।
5. मानवतावादी शिक्षा का उद्देश्य बालक को उसकी महानता की अनुभूति कराना भी है अर्थात् उसमें ऐसा आत्म–बोध जगाना है कि वह समाज एवं सृष्टि का महत्वपूर्ण अंग बन सके। उसमें विकास की असीम सम्भावनाएँ हैं।
6. विद्यार्थियों में उच्च मूल्यों (बी.वेल्यू) का विकास करना अर्थात् उनमें उच्च स्तरीय एवं मानवीय मान्यताओं का विकास करना। मानवतावादी शिक्षा भौतिक मान्यताओं को स्वीकार करते हुए भी इस बात पर बल देती है कि प्रत्येक व्यक्ति का आध्यात्मिक स्तर ऊपर उठे एवं उनमें उन मान्यताओं का विकास हो जिनसे समस्त मानव जाति एक सूत्र में बँधती है।
7. मानवतावादी शिक्षा अन्त में हर बालक को एक अच्छा मनुष्य बनाने की कल्पना करती है एवं इस बात पर बल देती है कि विद्यालय में ऐसे वातावरण की स्थापना होनी चाहिए तथा उसे ऐसे अनुभव प्रदान किये जाने चाहिए जो बालक में विवेक का विकास करके उसे ऊँचा उठा सकें।
8. बालक के मानसिक स्वास्थ्य का विकास करना मानवतावादी शिक्षा का एक अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य है। वह इस बात पर बल देता है कि जीवन में सुख एवं शांति का अनुभव करना परम आवश्यक है। स्वस्थ मन एवं मस्तिष्क मैसलों के मतानुसार व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास एवं सामाजिक समन्वय के लिए भी आवश्यक है।
9. मानवतावादी शिक्षा मूल रूप से यह स्वीकार करती है कि मानव एक विचारशील प्राणी है। अतः उसकी विचारशीलता स्वभाव एवं धैर्य का विकास करने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए जिससे वह स्वयं सत्य और असत्य के बीच भेद कर सके।

टैगोर ने कहा कि आधुनिक युग की शिक्षा का उद्देश्य है चेतना को विश्व मानवता के लिए उत्पादित करना। अतः जो पश्चिमी सभ्यता की निन्दा करते हैं और अपनी दकियानूसी शिक्षा–प्रणाली के आध्यात्मिक अधिनायकत्व पर अहंकार पालते हैं वे दिग्भ्रमित हैं, क्योंकि ज्ञान ही सत्य है जिसके प्रवेश के लिए किसी दिशा के द्वार बन्द नहीं रखे जा सकते।

इसी क्रम में टैगोर ने बताया कि इस दुनिया के भावी कर्णधार वहीं होंगे जो राष्ट्रवादी अहंकार पर विजय प्राप्त कर लेंगे जो सहानुभूति की समझ का विकास करेंगे अथवा जातिगत भेदभावों के अवरोधकों को हटाने में सक्षम होंगे।

'शिक्षा का विकेन्द्रीकरण शीर्षक' से रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अनिवार्य शिक्षा के संबंध में कहा है कि अन्य देशों में अनिवार्य शिक्षा चालू हुए थोड़े ही दिन हुए हैं। हमारे देश में जो जन शिक्षा चालू है उसे अनिवार्य नहीं कहा जा सकता, उसे कहा जाना चाहिए स्वैच्छिक अर्थात् अपनी इच्छा से ली जाने वाली शिक्षा। यह बहुत पुरानी चीज है तथा बहुत दिनों से चली आयी है। उसके पीछे कोई कानून नहीं था तागीद नहीं थी। घर–घर में उसका स्वतः संचार था जैसे हमारे पूरे शरीर में खून का संचालन होता है।

भारत का इतिहास मानवता का पक्षधर रहा है। इस देश में अधिकारों से अधिक महत्त्व कर्त्तव्यों को दिया जाता है। जब एक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का निर्वाह निष्ठा, ईमानदारी और त्याग की भावना से करता है तो दूसरों के अधिकार स्वतः ही सुरक्षित हो जाते हैं। हमारी संस्कृति में अधिकारों व कर्तव्यों का प्रायोगिक रूप दृष्टिगोचर होता है।

'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया' के

लोककल्याणकारी मंत्रों का पाठ करने वाला भारत निःसंदेह मानवीय सभ्यता के आदिकाल में विश्व का सिरमोर रहा है। ज्ञान को आचरण में ढालने वाले तपस्वी यहाँ के विद्वानों, आचार्यो के धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्रभावी शिक्षण विधियों के समक्ष राजसत्ता नतमस्तक होती है यही कारण है कि उनकी चरण धूली को स्पर्श करने के लिए विश्व के कोने–कोने से मेगस्थनीज अलबरूनी, ह्वेनसांग, फाह्यान आदि दौड़े चले आते थे।

बदलते वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तीव्र भौतिक प्रगति, विश्वयुद्ध की विभीषिका, आतंकवाद, राजनैतिक अपराधीकरण, मीडिया के आक्रमण, जनसंख्या विस्फोट, भूखमरी, गरीबी, व्याभिचार, आदि के विनाशक तत्त्वों ने मानवीय चरित्र और सभ्यता में शोचनीय एवं गहरा संकट उत्पन्न कर दिया है। नक्सली हिंसा, जम्मू–कश्मीर में जारी छद्म युद्ध, कागज की चिन्दी बीनते बच्चे, करोड़ों का घोटाला करते नेता, मुम्बई बम्ब काण्ड, राष्ट्रमण्डल खेलों में भ्रष्टाचार, आदि कुछ दृश्य मानवीय शोषण एवं चारित्रिक पतन के ज्वलंत उदाहरण हैं। इतना ही नहीं यह विश्व गुरू भारत आज फ्रांस, पाकिस्तान, बांग्लादेश के बाद भ्रष्ट राष्ट्र माना जाता है। मानवता के प्रसंग में विश्व के अधिकांश देशों में भी स्थिति संतोषजनक नहीं है।

डॉ. आवेन ने ईरान में हो रहे अत्याचारों के संबंध में स्वीकार किया था कि वहां उनके देश के लिए 'मानवता मुद्दे से ईरानी तेल ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।' यह तथ्य है कि आज लगभग समूचे विश्व में मानवता का व्यापक स्तर पर हनन हो रहा है, किंतु मानवाधिकार आयोग कुछ पक्षपातपूर्ण रिपोर्ट प्रकाशित करने के अलावा और कुछ नहीं कर पाया है, यहां तक कि अब तक सही बात को कहने का साहस भी नहीं जुटा पाया है। चीन, अफगानिस्तान तथा वर्तमान में पाकिस्तान तथा तालिबान की स्थिति चिंताजनक है।

सन्दर्भ ग्रंथ –सूची

बिसवाल तपन, मानवाधिकार जेन्डर एवं पर्यावरण, विवा बुक्स प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2008

कढिड़ अमरसिंह, मानवाधिकार एवं भारतीय न्याय पालिका की भूमिका, सुमन प्रकाशन उदयपुर 1983

चढ्ढा पी. के., राजनीति शास्त्र के मूल आधार, साहित्य भवन, आगरा 1993

वर्मा प्रीति एवं श्रीवास्वत डी. एन., मनोविज्ञान व शिक्षा में सांख्यिकीय सतम संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1982

बसु दुर्गादास, शॉर्टर कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ इण्डिया, तेरहवाँ संस्करण, वाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर, 2006.

भटनागर, आर.पी. एवं भटनागर मीनाक्षी, अनुसंधान विधियाँ, लॉयल बुक डिपो, मेरठ, 2005

बुच, एम.बी., फोर्थ सर्वे ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, वॉल्यूम–II, एन. सी. ई. आर. टी. 2005,

डे.डीजे, द कॉस्टीट्यूशन ऑफ इण्डिया, वॉल्यूम 3, तृतीय संस्करण, एशिया लॉ हाउस, हैदराबाद, 2008

एन. सी.आर.टी. वॉल्युम–II, फिफथ सर्वे ऑफ एजुकेशन रिसर्च, 1988–92

कपिल एच. के., अनुसंधान विधियाँ, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा, 2006

रायजादा डॉ. बी. एस., शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्त्व, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1997

शर्मा आर.ए., शिक्षा अनुसंधान, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस,मरेठ, 2002

शर्मा आर, ए., शिक्षा अनुसंधान, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ, 1995

शर्मा वीरेन्द्र प्रकाश, रिसर्च मैथोडोलोजी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004

Freeman, M., Human Rights: An Interdisciplinary Approach, Cambridge : Polity Press, 2003

Syed, M.H., Human Rights : The New Era, (Kilaso Book, New Delhi, 2006)

Sen Shankar, Human Rights in Developing Society, Delhi NHP Publishing Corporation, 1994.

Resolution of Commission on Human Rights adopted with 5th session in 1949.

Mishra, R.C., Governance of Human Rights, Challenges in the age of Globalization, Delhi, Autopress, 2003.

Nirmal, Chiranjivi J, (ed.) Human rights in India Historical, Social and Political Perspective, New Delhi, Oxford University Press. 2000